16

आपातकालीन प्रावधान
(Emergency Provisions)

संविधान के भाग XVIII में अनुच्छेद 352 से 360 तक आपातकालीन प्रावधान उल्लिखित हैं। ये प्रावधान केंद्र को किसी भी असामान्य स्थिति से प्रभावी रूप से निपटने में सक्षम बनाते हैं। संविधान में इन प्रावधानों को जोड़ने का उद्देश्य देश की संप्रभुता, एकता, अखंडता, लोकतांत्रिक राजनैतिक व्यवस्था तथा संविधान की सुरक्षा करना है।

आपातकालीन स्थिति में केंद्र सरकार सर्वशक्तिमान हो जाता है तथा सभी राज्य, केंद्र के पूर्ण नियंत्रण में आ जाते हैं। ये संविधान में औपचारिक संशोधन किए बिना ही संघीय ढांचे को एकात्मक ढांचे में परिवर्तित कर देते हैं। सामान्य समय में राजनैतिक व्यवस्था का संघीय स्वरूप से आपातकाल में एकात्मक स्वरूप में इस प्रकार का परिवर्तन भारतीय संविधान की अद्वितीय विशेषता है। इस परिप्रेक्ष्य में डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि:[1]

''अमेरिका सहित सभी संघीय व्यवस्थाएं, संघवाद के एक कड़े स्वरूप में हैं। किसी भी परिस्थिति में ये अपना स्वरूप और आकार परिवर्तित नहीं कर सकते। दूसरी ओर भारत का संविधान, समय एवं परिस्थिति के अनुसार एकात्मक व संघीय दोनों प्रकार का हो सकता है। यह इस प्रकार निर्मित किया गया है कि सामान्यत: यह संघीय व्यवस्था के अनुरूप कार्य करता है परंतु आपातकाल में यह एकात्मक व्यवस्था के रूप में कार्य करता है।''

संविधान में तीन प्रकार के आपातकाल[2] को निर्दिष्ट किया गया है:

1. युद्ध, बाह्य आक्रमण और सशस्त्र विद्रोह[2] के कारण आपातकाल (अनुच्छेद 352), को 'राष्ट्रीय आपातकाल' के नाम से जाना जाता है। किंतु संविधान ने इस प्रकार के आपातकाल के लिए 'आपातकाल की घोषणा' वाक्य का प्रयोग किया है।
2. राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता के कारण आपातकाल को राष्ट्रपति शासन (अनुच्छेद 356) के नाम से जाना जाता है। इसे दो अन्य नामों से भी जाना जाता है—राज्य आपातकाल अथवा संवैधानिक आपातकाल। किंतु संविधान ने इस स्थिति के लिए आपातकाल शब्द का प्रयोग नहीं किया है।
3. भारत की वित्तीय स्थायित्व अथवा साख के खतरे के कारण अधिरोपित आपातकाल, वित्तीय आपातकाल (अनुच्छेद 360) कहा जाता है।

राष्ट्रीय आपातकाल

घोषणा के आधार

यदि भारत की अथवा इसके किसी भाग की सुरक्षा को युद्ध अथवा बाह्य आक्रमण अथवा सशस्त्र विद्रोह के कारण खतरा उत्पन्न हो गया हो तो अनुच्छेद 352 के अंतर्गत राष्ट्रपति, राष्ट्रीय आपात की

घोषणा कर सकता है। राष्ट्रपति, राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा वास्तविक युद्ध अथवा बाह्य आक्रमण अथवा सशक्त विद्रोह से पहले भी कर सकता है। यदि वह समझे कि इनका आसन्न खतरा है।

राष्ट्रपति युद्ध, बाह्य आक्रमण, सशस्त्र विद्रोह अथवा आसन्न खतरे के आधार पर वह विभिन्न उद्घोषणाएं भी जारी कर सकता है। चाहे उसने पहले से कोई उद्घोषणा की हो या न की हो या ऐसी उद्घोषणा लागू हो। यह प्रावधान 1975 में 38वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा जोड़ा गया है।

जब राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा युद्ध अथवा बाह्य आक्रमण के आधार पर की जाती है, तब इसे बाह्य आपातकाल के नाम से जाना जाता है। दूसरी ओर, जब इसकी घोषणा सशस्त्र विद्रोह के आधार पर की जाती है तब इसे 'आंतरिक आपात काल' के नाम से जाना जाता है।

राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा संपूर्ण देश अथवा केवल इसके किसी एक भाग पर लागू हो सकती है। 1976 के 42वें संविधान संशोधन अधिनियम ने राष्ट्रपति को भारत के किसी विशेष भाग पर राष्ट्रीय आपातकाल लागू करने का अधिकार प्रदान किया है।

प्रारंभ में संविधान ने राष्ट्रीय आपातकाल के तीसरे आधार के रूप में 'आंतरिक गड़बड़ी' का प्रयोग किया था किंतु यह शब्द बहुत ही अस्पष्ट तथा विस्तृत अनुमान वाला था। अत: 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा आंतरिक गड़बड़ी शब्द को 'सशस्त्र विद्रोह' शब्द से विस्थापित कर दिया गया। अत: अब आंतरिक गड़बड़ी के आधार पर आपातकाल की घोषणा करना संभव नहीं है, जैसा कि 1975 में इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार ने किया था।

किंतु राष्ट्रपति, राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा केवल मंत्रिमंडल की लिखित सिफारिश[3] प्राप्त होने पर ही कर सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि आपातकाल की घोषणा केवल मंत्रिमंडल की सहमति से ही हो सकती है न कि मात्र प्रधानमंत्री की सलाह से। 1975 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने बिना मंत्रिमंडल की सलाह के राष्ट्रपति को आपातकाल की घोषणा करने की सलाह दी और आपातकाल लागू करने के बाद मंत्रिमंडल को इस उद्घोषणा के बारे में बताया। 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम ने प्रधानमंत्री के इस संदर्भ में अकेले बात करने और निर्णय लेने की संभावना को समाप्त करने के लिए इस सुरक्षा का परिचय दिया है।

1975 के 38वें संशोधन अधिनियम ने राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा न्यायिक समीक्षा की परिधि से बाहर रखा था किंतु इस प्रावधान को 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा समाप्त कर दिया गया। इसके अतिरिक्त *मिनर्वा मिल्स मामले* (1980)[4] में उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा को अथवा इस आधार पर कि घोषणा को कि वह पूरी तरह बाह्य प्रभाव तथा असंबद्ध तथ्यों पर या विवेक शून्य या हठधर्मिता के आधार पर की गयी हो तो अदालत में चुनौती दी जा सकती है।

संसदीय अनुमोदन तथा समयावधि

संसद के दोनों सदनों द्वारा आपातकाल की उद्घोषणा जारी होने के एक माह के भीतर अनुमोदित होनी आवश्यक है। प्रारंभ में संसद द्वारा अनुमोदन के लिए दी गई समय सीमा दो माह थी किंतु 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा इसे घटा दिया गया। किंतु आपातकाल की उद्घोषणा ऐसे समय होती है, जब लोकसभा का विघटन हो गया हो अथवा लोकसभा का विघटन एक माह के समय में बिना उद्घोषणा के अनुमोदन के हो गया हो; तब उद्घोषणा लोकसभा के पुनर्गठन के बाद पहली बैठक से 30 दिनों तक जारी रहेगी, जबकि इस बीच राज्यसभा द्वारा इसका अनुमोदन कर दिया गया हो।

यदि संसद के दोनों सदनों से इसका अनुमोदन हो गया हो तो आपातकाल छह माह तक जारी रहेगा तथा प्रत्येक छह माह में संसद के अनुमोदन से इसे अनंतकाल तक बढ़ाया जा सकता है। आवधिक संसदीय अनुमोदन का यह प्रावधान भी 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा जोड़ा गया है। इसके पहले आपातकाल एक बार संसद द्वारा अनुमोदन के पश्चात मंत्रिमंडल की इच्छानुसार प्रभावी रह सकता था। किंतु यदि लोकसभा का विघटन, छह माह की अवधि में आपातकाल को जारी रखने के अनुमोदन के बिना हो जाता है, तब उद्घोषणा लोकसभा के पुनर्गठन के बाद पहली बैठक से 30 दिनों तक जारी रहती है, जबकि इस बीच राज्यसभा ने इसके जारी रहने का अनुमोदन कर दिया हो।

आपातकाल की उद्घोषणा अथवा इसके जारी रहने का प्रत्येक प्रस्ताव संसद के दोनों सदनों द्वारा विशेष बहुमत से पारित होना चाहिए, जो कि है—(अ) उस सदन के कुल सदस्यों का बहुमत (ब) उस सदन में उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों का

दो-तिहाई बहुमत। इस विशेष बहुमत का प्रावधान 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा किया गया। इससे पूर्व ऐसा प्रस्ताव संसद के साधारण बहुमत द्वारा पारित हो सकता था।

उद्घोषणा की समाप्ति

राष्ट्रपति द्वारा आपातकाल की उदघोषणा किसी भी समय एक दूसरी उद्घोषणा से समाप्त की जा सकती है। ऐसी उद्घोषणा को संसदीय अनुमोदन की आवश्यकता नहीं होती।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति को ऐसी उद्घोषणा को समाप्त कर देना आवश्यक है, जब लोकसभा इसके जारी रहने के अनुमोदन का प्रस्ताव निरस्त कर दे। यह सुरक्षा उपाय भी 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा पेश किया गया था। संशोधन से पहले राष्ट्रपति किसी उद्घोषणा को अपने विवेक से समाप्त कर सकता था तथा लोकसभा का इस संदर्भ में कोई नियंत्रण नहीं था।

1978 के 44वें संशोधन अधिनियम ने यह व्यवस्था भी की है कि यदि लोकसभा की कुल सदस्य संख्या के 1/10 सदस्य स्पीकर (अध्यक्ष) को (अथवा राष्ट्रपति को यदि सदन नहीं चल रहा हो) लिखित रूप से नोटिस दें तो 14 दिन के अंदर उद्घोषणा के जारी रहने के प्रस्ताव को अस्वीकार करने के लिए सदन की विशेष बैठक विचार-विमर्श के उद्देश्य से बुलाई जा सकती है।

उद्घोषणा को अस्वीकार करने का प्रस्ताव उद्घोषणा के जारी रहने के अनुमोदन के प्रस्ताव से निम्न दो तरह से भिन्न होता है:

1. पहला केवल लोकसभा से ही पारित होना आवश्यक है, जबकि दूसरे को संसद के दोनों सदनों से पारित होने की आवश्यकता है।
2. पहले को केवल साधारण बहुमत से स्वीकार किया जाता है, जबकि दूसरे को विशेष बहुमत से स्वीकार किया जाता है।

राष्ट्रीय आपातकाल के प्रभाव

आपात की उद्घोषणा के राजनीतिक तंत्र पर तीव्र तथा दूरगामी प्रभाव होते हैं। इन परिणामों को निम्न तीन वर्गों में रखा जा सकता है:

1. केंद- राज्य संबंधों पर प्रभाव,
2. लोकसभा तथा राज्य विधानसभा के कार्यकाल पर प्रभाव, तथा;
3. मौलिक अधिकारों पर प्रभाव।

केंद्र-राज्य संबंधों पर प्रभाव

जब आपातकाल की उद्घोषणा लागू होती है, तब केंद्र-राज्य के सामान्य संबंधों में मूलभूत परिवर्तन होते हैं। इनका अध्ययन तीन शीर्षकों के अंतर्गत किया जा सकता है—कार्यपालक, विधायी तथा वित्तीय।

(अ) कार्यपालक : राष्ट्रीय आपातकाल के समय केंद्र की कार्यपालक शक्तियों का विस्तार, राज्य को उसकी कार्यपालक शक्तियों के प्रयोग के तरीकों के संबंध में निर्देश देने तक हो जाता है। सामान्य समय में केंद्र, राज्यों को केवल कुछ विशेष विषयों पर ही कार्यकारी निर्देश दे सकता है किंतु राष्ट्रीय आपातकाल के समय केंद्र को किसी राज्य को किसी भी विषय पर कार्यकारी निर्देश देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। अत: राज्य सरकारें, केंद्र के पूर्ण नियंत्रण में हो जाती हैं, यद्यपि उन्हें निलंबित नहीं किया जाता।

(ब) विधायी : राष्ट्रीय आपातकाल के समय संसद को राज्य सूची में वर्णित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। यद्यपि किसी राज्य विधायिका की विधायी शक्तियों को निलंबित नहीं किया जाता, यह संसद की असीमित शक्ति का प्रभाव है। अत: केंद्र तथा राज्यों के मध्य विधायी शक्तियों के सामान्य वितरण का निलंबन हो जाता है, यद्यपि राज्य विधायिका निलंबित नहीं होती। संक्षेप में, संविधान संघीय की जगह एकात्मक हो जाता है।

संसद द्वारा आपातकाल में राज्य के विषयों पर बनाए गए कानून आपातकाल की समाप्ति के बाद छह माह तक प्रभावी रहते हैं।

जब राष्ट्रीय आपात की उद्घोषणा लागू होती है, तब यदि संसद का सत्र नहीं चल रहा हो तो राष्ट्रपति, राज्य सूची के विषयों पर भी अध्यादेश जारी का सकता है।

इसके अतिरिक्त संसद, राष्ट्रीय आपातकाल के परिणामस्वरूप केंद्र अथवा इसके अधिकारियों तथा प्राधिकारियों को संघ सूची से बाहर के विषयों पर इसके विस्तृत अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत बनाए गए कानूनों को लागू करने की शक्ति तथा कर्त्तव्य प्रदान कर सकती है।

1976 के 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई कि उपरोक्त वर्णित दो परिणामों (कार्यकारी तथा

विधायी) का केवल आपातकाल लागू होने वाले राज्य तक ही नहीं वरन् किसी अन्य राज्य में भी विस्तार होता है।

(स) वित्तीय : जब राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा लागू हो तब राष्ट्रपति, केंद्र तथा राज्यों के मध्य करों के सवैंधानिक वितरण को संशोधित कर सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति, केंद्र से राज्यों को दिए जाने वाले धन (वित्त) को कम अथवा समाप्त कर सकता है। ऐसे संशोधन उस वित्त वर्ष की समाप्ति तक जारी रहते हैं, जिसमें आपातकाल समाप्त होता है। राष्ट्रपति के ऐसे प्रत्येक आदेश को संसद के दोनों सदनों के सभा पटलों पर रखा जाना आवश्यक है।

लोकसभा तथा राज्य विधानसभा के कार्यकाल पर प्रभाव

जब राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा लागू हो तब लोकसभा का कार्यकाल इसके सामान्य कार्यकाल (5 वर्ष) से आगे संसद द्वारा विधि बनाकर एक समय में एक वर्ष के लिए (कितने भी समय तक) बढ़ाया जा सकता है। किंतु यह विस्तार आपातकाल की समाप्ति के बाद छह माह से ज्यादा नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए पांचवीं लोकसभा (1971-1977) का कार्यकाल दो बार एक समय में एक वर्ष के लिए बढ़ाया गया था।[5]

इसी प्रकार, राष्ट्रीय आपात के समय संसद किसी राज्य विधानसभा का कार्यकाल (पांच वर्ष) प्रत्येक बार एक वर्ष के लिए (कितने भी समय तक) बढ़ा सकती है जो कि आपात काल की समाप्ति के बाद अधिकतम छह माह तक ही रहता है।

मूल अधिकारों पर प्रभाव

अनुच्छेद 358 तथा 359 राष्ट्रीय आपातकाल में मूल अधिकार पर प्रभाव का वर्णन करते हैं। अनुच्छेद 358, अनुच्छेद 19 द्वारा दिए गए मूल अधिकारों के निलंबन से संबंधित है, जबकि अनुच्छेद 359 अन्य मूल अधिकारों के निलंबन (अनुच्छेद 20 तथा 21 द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छोड़कर) से संबंधित है। ये दो प्रावधान निम्नानुसार वर्णित किए जाते हैं:

(अ) अनुच्छेद 19 के अंतर्गत प्रदत्त मूल अधिकारों का निलंबन : अनुच्छेद 358 के अनुसार जब राष्ट्रीय आपात की उद्घोषणा की जाती है जब अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त छह मूल अधिकार स्वत: ही निलंबित हो जाते हैं। इनके निलंबन के लिए किसी अलग आदेश की आवश्यकता नहीं होती है।

जब राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा लागू होती है तब राज्य अनुच्छेद 19 द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों से स्वतंत्र होता है। दूसरे शब्दों में, राज्य अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त 6 मूल अधिकारों को कम करने अथवा हटाने के लिए कानून बना सकता है अथवा कोई कार्यकारी निर्णय ले सकता है। ऐसे किसी कानून अथवा कार्य को, इस आधार पर कि यह अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त 6 मूल अधिकारों का उल्लंघन है, चुनौती नहीं दी जा सकती। जब राष्ट्रीय आपातकाल समाप्त हो जाता है, अनुच्छेद 19 स्वत: पुनर्जीवित हो जाता है तथा प्रभाव में आ जाता है। आपातकाल के बाद अनुच्छेद 19 के विपरीत बना कोई कानून अप्रभावी हो जाता है। किंतु आपातकाल के समय हुई किसी चीज का प्रतिकार (भरपाई) नहीं होता यहां तक कि आपातकाल के बाद भी। इसका तात्पर्य है कि आपातकाल में किए गए विधायी तथा कार्यकारी निर्णयों को आपातकाल के बाद भी चुनौती नहीं दी जा सकती।

1978 के 44वें संशोधन अधिनियम ने अनुच्छेद 358 की संभावना पर दो प्रकार से प्रतिबंध लगा दिया है। प्रथम अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त 6 मूल अधिकारों को युद्ध अथवा बाह्य आक्रमण के आधार पर घोषित आपातकाल में ही निलंबित किया जा सकता है न कि सशस्त्र विद्रोह के आधार पर। दूसरे, केवल उन विधियों को जो आपातकाल से संबंधित हैं चुनौती नहीं दी जा सकती है तथा ऐसे विधियों के अंतर्गत दिए गए कार्यकारी निर्णयों को भी चुनौती नहीं दी जा सकती है।

(ब) अन्य मूल अधिकारों का निलंबन: अनुच्छेद 359 राष्ट्रपति को आपातकाल के मूल अधिकारों को लागू करने के लिए न्यायालय में जाने के अधिकार को निलंबित करने के लिए अधिकृत करता है। अत: 359 के अंतर्गत मूल अधिकार नहीं अपितु उनका लागू होना निलंबित होता है। वास्तविक रूप में ये अधिकार जीवित रहते हैं केवल इनके तहत उपचार निलंबित होता है। यह निलंबन उन्हीं मूल अधिकारों से संबंधित होता है, जो राष्ट्रपति के आदेश में वर्णित होते हैं। इसके अतिरिक्त यह निलंबन आपातकाल की अवधि अथवा आदेश में वर्णित अल्पावधि हेतु लागू हो सकते हैं और निलंबन

का आदेश पूरे देश अथवा किसी भाग पर लागू किया जा सकता है। इसे संसद की मंजूरी के लिए प्रत्येक सदन में प्रस्तुत करना होता है।

जब राष्ट्रपति का आदेश प्रभावी रहता है तो राज्य उस मूल अधिकार को रोकने व हटाने के लिए कोई भी विधि बना सकता है या कार्यकारी कदम उठा सकता है। ऐसी किसी भी विधि या कार्य को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि यह संबंधित मूल अधिकार से साम्य नहीं रखता है। ऐसे किसी आदेश की अवधि समाप्त होने पर संबंधित विधि को मूल अधिकार के समान ही समाप्त माना जाएगा परंतु इस आदेश के दौरान बनाई विधि के अंतर्गत किए गए कार्य का इस आदेश के समाप्त होने के बाद कोई उपचार उपलब्ध नहीं होगा। इसका अर्थ है कि आदेश के प्रभाव में किए गए विधायी व कार्यकारी कार्यों को आदेश समाप्ति के उपरांत चुनौती नहीं दी जा सकती है।

44वां संविधान संशोधन अधिनियम 1978, अनुच्छेद 359 के क्षेत्र में दो प्रतिबंध लगाता है-प्रथम, राष्ट्रपति अनुच्छेद 20 तथा 21 के अंतर्गत दिए गए अधिकारों को लागू करने के लिए न्यायालय में जाने के अधिकार को निलंबित नहीं कर सकता है। अन्य शब्दों में, अपराध के लिए दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण का अधिकार (अनुच्छेद 20) तथा प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21) आपातकाल में भी प्रभावी रहता है। द्वितीय, केवल उन्हीं विधियों को चुनौती से संरक्षण प्राप्त है जो आपातकाल से संबंधित हैं, उन विधियों व कार्यों को नहीं जो इनके तहत लिए अथवा बनाए गए हैं।

अनुच्छेद 358 और 359 में अंतर

अनुच्छेद 358 और 359 में निम्नलिखित अंतर हैं:

1. अनुच्छेद 358 केवल अनुच्छेद 19 के अंतर्गत मूल अधिकारों से संबंधित है, जबकि अनुच्छेद 359 उन सभी मूल अधिकारों से संबंधित है, जिनका राष्ट्रपति के आदेश द्वारा निलंबन हो जाता है।
2. अनुच्छेद 358 स्वत: ही, आपातकाल की घोषणा होने पर अनुच्छेद 19 के अंतर्गत के मूल अधिकारों का निलंबन कर देता है। दूसरी ओर, अनुच्छेद 359 मूल अधिकारों का निलंबन स्वत: नहीं करता। यह राष्ट्रपति को यह शक्ति देता है कि वह मूल अधिकारों के निलंबन को लागू करे।
3. अनुच्छेद 358 केवल बाह्य आपातकाल (जब, युद्ध या बाह्य आक्रमण के आधार पर आपातकाल घोषित किया जाता है) में लागू होता है न कि आंतरिक आपातकाल (जब सशस्त्र विद्रोह के कारण आपातकाल घोषित होता है) के समय। दूसरी ओर, अनुच्छेद 359 बाह्य तथा आंतरिक दोनों आपातकाल में लागू होता है।
4. अनुच्छेद 358, अनुच्छेद 19 के अंतर्गत के मूल अधिकारों को आपातकाल की संपूर्ण अवधि के लिए निलंबित कर देता है जबकि अनुच्छेद 359 मूल अधिकारों के निलंबन को राष्ट्रपति द्वारा उल्लेख की गई अवधि के लिए लागू करता है। यह अवधि संपूर्ण आपातकालीन अवधि अथवा अल्पावधि हो सकती है।
5. अनुच्छेद 358 संपूर्ण देश में तथा अनुच्छेद 359 संपूर्ण देश अथवा किसी भाग विशेष में लागू हो सकता है।
6. अनुच्छेद 358, अनुच्छेद 19 को पूर्ण रूप से निलंबित कर देता है जबकि अनुच्छेद 359 अनुच्छेद 20 व 21 के निलंबन को लागू नहीं करता है।
7. अनुच्छेद 358 राज्य को अनुच्छेद 19 के अंतर्गत के मूल अधिकारों से साम्य नहीं रखने वाले नियम बनाने अथवा कार्यकारी कदम उठाने का अधिकार देता है जबकि अनुच्छेद 359 केवल उन्हीं मूल अधिकारों के संबंध में ऐसे कार्य करने का अधिकार देता है जिन्हें राष्ट्रपति के आदेश द्वारा निलंबित किया गया है।

अनुच्छेद 358 और अनुच्छेद 359 में एक समानता भी है। वे उन्हीं विधियों को चुनौती से उन्मुक्ति देते हैं, जो आपातकाल से संबंधित हैं, उनको नहीं जो आपातकाल संबंधित नहीं हैं। ऐसी विधियों के अंतर्गत किए कार्यों को भी दोनों अनुच्छेद संरक्षण देते हैं।

अब तक की गईं ऐसी घोषणाएं

इस प्रकार के आपातकाल अभी तक तीन बार—1962, 1971 और 1975 में घोषित किए गए हैं।

पहला राष्ट्रीय आपातकाल अक्तूबर 1962 में नेफ़ा नॉर्थ ईस्ट फ्रांटियर एजेन्सी (अब अरुणाचल प्रदेश) में चीनी आक्रमण के कारण लागू किया गया था और यह जनवरी 1968 तक जारी रहा। अत: 1965 में पाकिस्तान के विरुद्ध हुए युद्ध में नया आपातकाल जारी करने की आवश्यकता नहीं हुई।

दूसरा राष्ट्रीय आपातकाल दिसंबर, 1971 में पाकिस्तान के आक्रमण के फलस्वरूप जारी किया गया। यद्यपि यह आपातकाल प्रभावी था किंतु एक तीसरा राष्ट्रीय आपातकाल जून, 1975 में लागू हुआ। दूसरी तथा तीसरी दोनों ही आपातकाल घोषणाएं मार्च, 1977 में समाप्त की गईं।

पहली दो आपातकाल घोषणाएं (1962 और 1971) बाह्य आक्रमण के आधार पर, जबकि तीसरी आपातकाल घोषणा (1975) 'आंतरिक उपद्रव' के आधार पर थी। कुछ लोग पुलिस और सशस्त्र बलों को उनके कार्य तथा नित्य कर्त्तव्य के विरुद्ध उन्हें भड़का रहे थे।

1975 में घोषित आपातकाल (आंतरिक आपातकाल) सबसे ज्यादा विवादास्पद सिद्ध हुआ। उस समय आपातकाल में अधिकारों के दुरुपयोग के विरुद्ध व्यापक विरोध हुआ था। आपातकाल के बाद 1977 में हुए लोकसभा चुनावों में इंदिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी पराजित हो गई और जनता दल सत्ता में आया। इस सरकार ने 1975 में घोषित आपातकाल के कारणों तथा परिस्थितियों का पता लगाने के लिए 'शाह आयोग' का गठन किया गया। आयोग ने आपातकाल को तर्कसंगत नहीं बताया। अत: 44वां संशोधन, 1978 में लाया गया, जिसमें आपातकालीन अधिकारों के दुरुपयोग को रोकने के कई उपाय किए गए।

राष्ट्रपति शासन

आरोपण का आधार

अनुच्छेद 355 केंद्र को इस कर्तव्य के लिए विवश करती है कि प्रत्येक राज्य सरकार संविधान की प्रबंध व्यवस्था के अनुरूप ही कार्य करेंगी। इस कर्तव्य के अनुपालन के लिए केंद्र, अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राज्य में संविधान तंत्र के विफल हो जाने पर राज्य सरकार को अपने नियंत्रण में ले सकता है। यह सामान्य रूप में 'राष्ट्रपति शासन' के रूप में जाना जाता है। इसे 'राज्य आपात' या 'संवैधानिक आपातकाल' भी कहा जाता है।

राष्ट्रपति शासन अनुच्छेद 356 के अंतर्गत दो आधारों पर घोषित किया जा सकता है—एक तो अनुच्छेद 356 में ही उल्लिखित है तथा दूसरा अनुच्छेद 365 में:

1. अनुच्छेद 356 राष्ट्रपति को घोषणा जारी करने का अधिकार देता है, यदि वह आश्वस्त है कि वह स्थिति आ गई है कि राज्य सरकार संविधान के प्रावधानों के अनुरूप नहीं चल सकती है। राष्ट्रपति, राज्य के राज्यपाल (रिपोर्ट) के आधार पर या दूसरे ढंग से (राज्यपाल के विवरण के बिना) भी प्रतिक्रिया कर सकता है।
2. अनुच्छेद 365 के अनुसार यदि कोई राज्य केंद्र द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन करने या उसे प्रभावी करने में असफल होता है तो यह राष्ट्रपति के लिए विधिसंगत होगा कि उस स्थिति को संभाले, जिसमें अब राज्य सरकार संविधान की प्रबंध व्यवस्था के अनुरूप नहीं चल सकती।

संसदीय अनुमोदन तथा समयावधि

राष्ट्रपति शासन के प्रभाव की घोषणा जारी होने के दो माह के भीतर इसका संसद के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदन हो जाना चाहिए। यदि राष्ट्रपति शासन का घोषणापत्र लोकसभा के विघटित होने के समय जारी होता है या लोकसभा दो माह के भीतर बिना घोषणापत्र को स्वीकृत किए विघटित हो जाती है, तब घोषणापत्र लोकसभा की पहली बैठक के तीस दिन तक बना रहता है, बशर्ते राज्यसभा ने इसे निश्चित समय में स्वीकृत कर दिया हो।

यदि दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत हो तो राष्ट्रपति शासन छह माह तक चलता है[6] इसे अधिकतम तीन वर्ष[7] की अवधि के लिए संसद की प्रत्येक छह माह की स्वीकृति से बढ़ाया जा सकता है। हालांकि यदि छह माह की अवधि में यदि लोकसभा, राष्ट्रपति के शासन को जारी रखने के प्रस्ताव को मंजूर किए बिना विघटित हो जाती है तो यह घोषणा लोकसभा के पुनर्गठन के बाद इसकी प्रथम बैठक के तीस दिनों तक लागू रहेगी, परंतु इस अवधि में राज्यसभा द्वारा इसे मंजूरी देना आवश्यक है।

राष्ट्रपति शासन की घोषणा को मंजूरी देने वाला प्रत्येक प्रस्ताव किसी भी सदन द्वारा सामान्य बहुमत द्वारा पारित किया जा सकता है अर्थात् सदन में सदस्यों की उपस्थिति व मतदान का बहुमत।

44वें संविधान संशोधन अधिनियम 1978 में संसद द्वारा राष्ट्रपति शासन को एक वर्ष के बाद भी जारी रखने की शक्ति पर प्रतिबंध लगाने के लिए एक प्रावधान जोड़ा गया। अत: इसमें प्रावधान किया गया कि एक वर्ष के पश्चात्, राष्ट्रपति शासन को छह माह के लिए केवल तब बढ़ाया जा सकता है जब निम्नलिखित दो परिस्थितियां पूरी हों:

1. यदि पूरे भारत में अथवा पूरे राज्य या उसके किसी भाग में राष्ट्रीय आपात की घोषणा की गई हो, तथा

2. चुनाव आयोग यह प्रमाणित करे कि संबंधित राज्य में विधानसभा के चुनाव के लिए कठिनाइयां उपस्थित हैं।

राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति शासन की घोषणा को, किसी भी समय परवर्ती घोषणा द्वारा वापस लिया जा सकता है। ऐसी घोषणा के लिए संसद की अनुमति आवश्यक नहीं होती।

राष्ट्रपति शासन के परिणाम

जब किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो तो राष्ट्रपति को निम्नलिखित असाधारण शक्तियां प्राप्त हो जाती हैं:

1. वह राज्य सरकार के कार्य अपने हाथ में ले लेता है और उसे राज्यपाल तथा अन्य कार्यकारी अधिकारियों की शक्ति प्राप्त हो जाती है।
2. वह घोषणा कर सकता है कि संसद, राज्य विधायिका की शक्तियों का प्रयोग करेगी।
3. वह वे सभी आवश्यक कदम उठा सकता है, जिसमें राज्य के किसी भी निकाय या प्राधिकरण से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों को निलंबन करना शामिल है।

अत: जब राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो तो राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री के नेतृत्व वाली मंत्रिपरिषद को भंग कर देता है। राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति के नाम पर राज्य सचिव की सहायता से अथवा राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किसी सलाहकार की सहायता से राज्य का प्रशासन चलाता है। यही कारण है कि अनुच्छेद 356 के अंतर्गत की गई घोषणा को राज्य में 'राष्ट्रपति शासन' कहा जाता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति, राज्य विधानसभा को विघटित अथवा निलंबित कर सकता है।[8] संसद, राज्य के विधेयक और बजट प्रस्ताव को पारित करती है।

जब कोई राज्य विधानसभा इस प्रकार निलंबित हो अथवा विघटित हो:

1. संसद राज्य के लिए विधि बनाने की शक्ति राष्ट्रपति अथवा उनके द्वारा उल्लिखित किसी अधिकारी को दे सकती है।
2. संसद या किसी प्रतिनिधि मंडल के मामले में, राष्ट्रपति या अन्य कोई प्राधिकारी, केंद्र अथवा इसके अधिकारियों व प्राधिकरण पर शक्तियों पर विचार करने और कर्तव्यों के निर्वहन के लिए विधि बना सकते हैं।
3. जब लोकसभा का सत्र नहीं चल रहा हो तो राष्ट्रपति, संसद की अनुमति के लिए लंबित पड़े राज्य की संचित निधि के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है। एवं
4. जब संसद का सत्रावसान हो तो राष्ट्रपति, राज्य के लिए अध्यादेश जारी कर सकता है।

राष्ट्रपति अथवा संसद अथवा अन्य किसी विशेष प्राधिकारी द्वारा बनाया गया कानून, राष्ट्रपति शासन के पश्चात भी प्रभाव में रहेगा। अर्थात ऐसा कोई कानून जो इस अवधि में प्रभावी है, राष्ट्रपति शासन की घोषणा की समाप्ति पर अप्रभावी नहीं होगा। परंतु इसे राज्य विधायिका द्वारा वापस अथवा परिवर्तित अथवा पुन: लागू किया जा सकता है।

यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि राष्ट्रपति को संबंधित उच्च न्यायालय की शक्तियां प्राप्त नहीं होती हैं और वह उनसे संबंधित संवैधानिक प्रावधानों को निलंबित नहीं कर सकता। अन्य शब्दों में, राष्ट्रपति शासन की अवधि में संबंधित उच्च न्यायालय की स्थिति, स्तर, शक्तियां और कार्य प्रभावी रहती हैं।

अनुच्छेद 356 का प्रयोग

वर्ष 1950 से अब तक, 100 से अधिक बार राष्ट्रपति शासन का प्रयोग किया जा चुका है, अर्थात औसतन प्रत्येक वर्ष में दो बार इसका प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त, अनेक अवसरों पर राष्ट्रपति शासन का प्रयोग मनमाने ढंग से राजनैतिक व व्यक्तिगत कारणों से किया गया है। अत: अनुच्छेद 356 संविधान का सबसे विवादास्पद एवं आलोचनात्मक प्रावधान बन गया है।

सर्वप्रथम राष्ट्रपति शासन का प्रयोग 1951 में पंजाब में किया गया। अब तक लगभग सभी राज्यों में एक अथवा दो अथवा इससे अधिक बार, इसका प्रयोग हो चुका है। इस संबंध में ब्यौरा इस पाठ के अंत में तालिका 16.2 में दिया गया है।

जब 1977 में आंतरिक आपातकाल के पश्चात लोकसभा के चुनाव हुए तब सत्ताधारी कांग्रेस पार्टी चुनाव में हार गयी और जनता पार्टी सत्तारूढ़ हुई। मोरारजी देसाई के नेतृत्व वाली नई सरकार ने कांग्रेस शासित नौ राज्यों में इस आधार पर राष्ट्रपति शासन[9] लागू कर दिया कि वे राज्य विधानसभाएं जनमत खो चुकी हैं। जब 1980 में, कांग्रेस पार्टी सत्ता में आई तो उसने भी इसी आधार पर नौ राज्यों में राष्ट्रपति शासन[10] लागू कर दिया।

सन 1992 में बीजेपी शासित राज्यों (मध्य प्रदेश, हिमाचल व राजस्थान) में कांग्रेस पार्टी सरकार द्वारा इस आधार पर राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया कि ये राज्य केंद्र द्वारा धार्मिक संगठनों

पर लगाए गए प्रतिबंधों का अनुपालन करने में असमर्थ हो रहे थे। बोम्मई केस (1994)[11] में उच्चतम न्यायालय ने अपने एक दूरगामी निर्णय में, राष्ट्रपति शासन की घोषणा का इस आधार पर अनुमोदन किया कि धर्मनिरपेक्षता संविधान का 'मूल विशेषता' है। परंतु न्यायालय ने 1988 में नागालैंड, 1989 में कर्नाटक एवं 1991 में मेघालय में राष्ट्रपति शासन को वैध नहीं ठहराया।

डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने संविधान सभा में इस प्रावधान के आलोचकों को उत्तर देते हुए आशा व्यक्त की थी कि अनुच्छेद 356 की यह उग्र शक्ति एक 'मृत-पत्र' की भांति ही रहेगी और इसका प्रयोग अंतिम साधन के रूप में किया जाएगा। उन्होंने कहा:[12]

''केंद्र को उसके हस्तक्षेप से प्रतिबंधित करना चाहिए, क्योंकि वह प्रांत (राज्य) की संप्रभुता पर आक्रमण माना जाएगा। यह एक सैद्धांतिक प्रतिज्ञा है जिसमें हमें उन कारणों को मानना पड़ेगा कि हमारा संविधान एक संघीय है। ऐसा होने पर, यदि केंद्र प्रांतीय प्रशासन में कोई हस्तक्षेप करता है, तो यह संविधान द्वारा केंद्र पर लागू प्रावधानों के अंतर्गत होना चाहिए। मुख्य बात यह कि हमें यह उम्मीद करनी चाहिए कि ऐसे अनुच्छेद कभी भी प्रयोग में नहीं लाए जाएंगे और वे एक 'मृत-पत्र' होंगे। यदि कभी उनका प्रयोग होता है, तो मैं उम्मीद करता हूं कि राष्ट्रपति जिसमें ये सभी शक्तियां निहित हैं, प्रांत के प्रशासन को निलंबित करने से पूर्व उचित सावधानी बरतेगा।''

हालांकि, अनुवर्ती घटनाओं से स्पष्ट होता है जिसे संविधान का मृत-पत्र माना गया, वही राज्य सरकारों व विधानसभाओं के विरुद्ध एक घातक हथियार सिद्ध हुआ। इस संदर्भ में संविधान सभा के एक सदस्य एच.वी. कामथ ने एक दशक पूर्व कहा—''डॉ. अंबेडकर तो अब जीवित नहीं हैं परंतु ये अनुच्छेद अभी भी जीवित हैं।''

न्यायिक समीक्षा की संभावनाएं

1975 के 38वें संविधान संशोधन अधिनियम में यह प्रावधान कर दिया गया है कि अनुच्छेद 356 के प्रयोग में राष्ट्रपति को संतुष्ट किया जायेगा तथा इसे किसी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती। लेकिन 1978 के 44वें संविधान संशोधन से इस प्रावधान को समाप्त कर दिया गया कि राष्ट्रपति की संतुष्टि, न्याधिक समीक्षा से परे नहीं है।

बोम्मई मामले (1994) में, उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राष्ट्रपति शासन लागू करने के संबंध में निम्नलिखित निर्णय दिए:

1. राष्ट्रपति शासन लागू करने की राष्ट्रपति की घोषणा न्यायिक समीक्षा योग्य है।
2. राष्ट्रपति की संतुष्टि तर्कसंगत संसाधनों पर आधारित होनी चाहिए। राष्ट्रपति के कार्य पर न्यायालय द्वारा रोक लगाई जा सकती है, यदि यह अतार्किक अथवा अन्यथा आधार पर आधारित है अथवा यह दुर्भावना या तर्क विरुद्ध पाया जाए।
3. केंद्र पर यह जिम्मेदारी होगी कि वह राष्ट्रपति शासन को न्यायोचित सिद्ध करने के लिए तर्कसम्मत कारणों को प्रस्तुत करे।
4. न्यायालय यह नहीं देख सकता कि संसाधान सही अथवा पर्याप्त हैं अपितु यह देखता है कि कार्य तर्क सम्मत है अथवा नहीं।
5. यदि न्यायालय राष्ट्रपति की घोषणा को असंवैधानिक और अवैध पाता है तो उसे विघटित राज्य सरकार को पुन:स्थापित करने और निलंबित अथवा विघटित विधानसभा को पुन:बहाल करने का अधिकार है।
6. राज्य विधानसभा को केवल तभी विघटित किया जा सकता है जब राष्ट्रपति की घोषणा को संसद की अनुमति मिल जाती है। जब तक ऐसी कोई घोषणा को मंजूरी नहीं प्राप्त होती है, राष्ट्रपति विधानसभा को केवल निलंबित कर सकता है। यदि संसद इसे मंजूरी देने में असमर्थ होती है तो विधानसभा पुनर्जीवित हो जाती है।
7. धर्मनिरपेक्षता संविधान का 'मूल विशेषता' है। अत: यदि कोई राज्य सरकार सांप्रदायिक राजनीति करती है तो इस अनुच्छेद के अंतर्गत, उस पर कार्यवाही की जा सकती है।
8. राज्य सरकार का विधानसभा में विश्वास मत खोने का प्रश्न संसद में निश्चित किया जाना चाहिए जब तक यह न हो तब तक मंत्रिपरिषद बनी रहेगी।
9. जब केंद्र में कोई नया राजनैतिक दल सत्ता में आता है

तालिका 16.1 *राष्ट्रीय आपातकाल एवं राष्ट्रपति शासन में तुलना*

राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352)	राष्ट्रपति शासन (अनुच्छेद 356)
1. यह केवल तब उद्घोषित की जाती है जब भारत अथवा इसके किसी भाग की सुरक्षा पर युद्ध, बाह्य आक्रमण अथवा सशस्त्र विद्रोह का खतरा हो।	1. इसकी घोषणा तब की जाती है जब किसी राज्य की सरकार संविधान के प्रावधान के अनुसार कार्य न कर रही हो और इनका कारण युद्ध, बाह्य आक्रमण व सैन्य विद्रोह न हो।
2. इसकी घोषणा के बाद राज्य कार्यकारिणी व विधायिका संविधान के प्रावधानों के अंतर्गत कार्य करती रहती हैं। इसका प्रभाव यह होता है कि राज्य की विधायी एवं प्रशासनिक शक्तियां केंद्र को प्राप्त हो जाती हैं।	2. इस स्थिति में राज्य कार्यपालिका बर्खास्त हो जाती है तथा राज्य विधायिका या तो निलंबित हो जाती है अथवा विघटित हो जाती है। राष्ट्रपति, राज्यपाल के माध्यम से राज्य का प्रशासन चलाता है तथा संसद राज्य के लिए कानून बनाती है। संक्षेप में, राज्य की कार्यकारी व विधायी शक्तियां केंद्र को प्राप्त हो जाती हैं।
3. इसके अंतर्गत, संसद राज्य विषयों पर स्वयं नियम बनाती है अर्थात यह शक्ति किसी अन्य निकाय अथवा प्राधिकरण को नहीं दी जाती है।	3. इसके अंतर्गत, संसद राज्य के लिए नियम बनाने का अधिकार राष्ट्रपति अथवा उसके द्वारा नियुक्त अन्य किसी प्राधिकारी को सौंप सकती है। अब तक यह पद्वति रही है कि राष्ट्रपति संबंधित राज्य से संसद के लिए चुने गए सदस्यों की सलाह पर विधियां बनाता है। यह कानून 'राष्ट्रपति के नियम' के रूप में जाने जाते हैं।
4. इसके लिए अधिकतम समयावधि निश्चित नहीं है। इसे प्रत्येक छह माह बाद संसद से अनुमति लेकर अनिश्चित काल तक लागू किया जा सकता है।	4. इसके लिए अधिकतम तीन वर्ष की अवधि निश्चित की गई है। इसके पश्चात इसकी समाप्ति तथा राज्य में सामान्य संवैधानिक तंत्र की स्थापना आवश्यक है।
5. इसके अंतर्गत सभी राज्यों तथा केंद्र के बीच संबंध परिवर्तित होते हैं।	5. इसके तहत केवल उस राज्य जहां पर आपातकाल लागू हो तथा केंद्र के बीच संबंध परिवर्तित होते हैं।
6. इसकी घोषणा करने अथवा इसे जारी रखने से संबंधित सभी प्रस्ताव संसद में विशेष बहुमत द्वारा पारित होने चाहिए।	6. इसको घोषणा करने अथवा इसे जारी रखने से संबंधित सभी प्रस्ताव संसद के सामान्य बहुमत द्वारा पारित होने चाहिए।
7. यह नागरिकों के मूल अधिकारों को प्रभावित करता है।	7. यह नागरिकों के मूल अधिकारों को प्रभावित करते हैं।
8. लोकसभा इसकी घोषणा वापस लेने के लिए प्रस्ताव पारित कर सकती है।	8. इसमें ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। इसे राष्ट्रपति स्वयं वापस ले सकता है।

तो उसे राज्यों में अन्य दलों की सरकार को बर्खास्त करने का अधिकार प्राप्त नहीं होगा।

10. अनुच्छेद 356 के अधीन शक्तियां विशिष्ट शक्तियां हैं इनका प्रयोग विशेष परिस्थितियों में यदा-कदा ही करना चाहिए।

उपयुक्त और अनुपयुक्त प्रयोग के मामले

सरकारिया आयोग की केंद्र-राज्य संबंधों (1988) पर आधारित रिपोर्ट तथा उच्चतम न्यायालय का बोम्मई मामला (1994) में वे परिस्थितियां उल्लिखित हैं, जहां अनुच्छेद 356 का उचित व अनुचित रूप से प्रयोग[13] किया गया है। किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन का प्रयोग निम्नलिखित परिस्थितियों में उचित होगा:

1. जब आम चुनावों के बाद विधानसभा में किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो अर्थात त्रिशंकु विधानसभा हो।
2. जब बहुमत प्राप्त दल सरकार बनाने से इनकार कर दे और राज्यपाल के समक्ष विधानसभा में स्पष्ट बहुमत वाला कोई गठबंधन न हो।
3. जब मंत्रिपरिषद त्यागपत्र दे दे और अन्य कोई दल सरकार बनाने की इच्छुक न हो अथवा स्पष्ट बहुमत

के अभाव में सरकार बनाने की अवस्था में न हो।

4. यदि राज्य सरकार केंद्र के किसी संवैधानिक निर्देश को मानने से इनकार कर दे।
5. जहां आंतरिक उच्छेदन हो उदाहरण के लिए, सरकार जब सोच-विचारपूर्वक संविधान व कानून के विरुद्ध कार्य करे और इसका परिणाम एक उग्र विद्रोह के रूप में फूट पड़े।
6. भौतिक विखंडन, जहां सरकार इच्छापूर्वक अपने संवैधानिक दायित्व निभाने से इनकार कर दे जो राज्य की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न कर दे।

किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन का उपयोग निम्नलिखित परिस्थितियों में अनुचित है:

1. जब मंत्रिपरिषद त्यागपत्र दे दे अथवा सदन के बहुमत के अभाव के कारण बर्खास्त कर दी जाए और राज्यपाल एक वैकल्पिक सरकार की संभावनाओं की जांच किए बिना राष्ट्रपति शासन आरोपित करने की सिफारिश करे।
2. जब राज्यपाल मंत्रिपरिषद के समर्थन के संबंध में स्वयं निर्णय ले एवं मंत्रिपरिषद को सदन में बहुमत सिद्ध करने की अनुमति दिए बिना राष्ट्रपति शासन लागू करने की सिफारिश कर दे।
3. जब विधानसभा में बहुमत प्राप्त दल, लोकसभा के आम चुनावों में भारी हार का सामना करे जैसा कि 1977 तथा 1980 में हुआ था।
4. आंतरिक गड़बड़ी जिससे कोई आंतरिक उच्छेदन अथवा भौतिक विघटन/गड़बड़ी न हो।
5. राज्य में कुशासन अथवा मंत्रिपरिषद के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोप अथवा राज्य में वित्तीय संकट।
6. जहां राज्य सरकार को अपनी गलती सुधारने के लिए पूर्व चेतावनी नहीं दी गई हो। केवल उन मामलों को छोड़कर जहां स्थितियां, विपत्तिकारक घटनाओं में परिवर्तित होने वाली हों।
7. जहां सत्ताधारी दल के अंदर की परेशानियों के सुलझाने के लिए अथवा किसी के बाह्य अथवा असंगत उद्देश्य के लिए शक्ति का प्रयोग संविधान के विरुद्ध किया जाए।

वित्तीय आपातकाल

उद्घोषणा का आधार

अनुच्छेद 360 राष्ट्रपति को वित्तीय आपात की घोषणा करने की शक्ति प्रदान करता है, यदि वह संतुष्ट हो कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसमें भारत अथवा उसके किसी क्षेत्र की वित्तीय स्थिति अथवा प्रत्यय खतरे में हो।

38वें संविधान संशोधन अधिनियम 1975 में कहा गया कि राष्ट्रपति की वित्तीय आपातकाल की घोषणा करने की संतुष्टि अंतिम और निर्णायक है तथा किसी भी न्यायालय में किसी भी आधार पर प्रश्नयोग्य नहीं है। परंतु 44वें संविधान संशोधन अधिनियम 1978 में इस प्रावधान को समाप्त कर यह कहा गया कि राष्ट्रपति की संतुष्टि न्यायिक समीक्षा से परे नहीं है।

संसदीय अनुमोदन एवं समयावधि

वित्तीय आपात की घोषणा को, घोषित तिथि के दो माह के भीतर संसद की स्वीकृति मिलना अनिवार्य है। यदि वित्तीय आपातकाल की घोषणा करने के दौरान यदि लोकसभा विघटित हो जाए अथवा दो माह के भीतर इसे मंजूर करने से पूर्व लोकसभा विघ्नटित हो जाए तो यह घोषणा पुनर्गठित लोकसभा की प्रथम बैठक के बाद तीस दिनों तक प्रभावी रहेगी, परंतु इस अवधि में इसे राज्यसभा की मंजूरी मिलना आवश्यक है।

एक बार यदि संसद के दोनों सदनों से इसे मंजूरी प्राप्त हो जाए तो वित्तीय आपात अनिश्चित काल के लिए तब तब प्रभावी रहेगा जब तक इसे वापस न लिया जाए। यह दो बातों को इंगित करता है:

1. इसकी अधिकतम समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है और
2. इसे जारी रखने के लिए संसद की पुन:मंजूरी आवश्यक नहीं है।

वित्तीय आपातकाल की घोषणा को मंजूरी देने वाला प्रस्ताव, संसद के किसी भी सदन द्वारा सामान्य बहुमत द्वारा पारित किया जा सकता है अर्थात सदन में उपस्थित सदस्यों की उपस्थिति एवं मतदान का बहुमत।

राष्ट्रपति द्वारा किसी भी समय एक अनुवर्ती घोषणा द्वारा वित्तीय आपात की घोषणा वापस ली जा सकती है। ऐसी घोषणा को किसी संसदीय मंजूरी की आवश्यकता नहीं है।

वित्तीय आपातकाल के प्रभाव

वित्तीय आपात की परवर्ती घटनाएं निम्न प्रकार हैं:

1. केंद्र की आधिकारिक कार्यकारिणी का विस्तार (i) किसी राज्य को वित्तीय औचित्य संबंधी सिद्धांतों के पालन का निर्देश देना और (ii) राष्ट्रपति यदि चाहे तो इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त और आवश्यक निर्देश दे सकता है।
2. ऐसे किसी भी निर्देश में इन प्रावधानों का उल्लेख हो सकता है—(i) राज्य की सेवा में किसी भी अथवा सभी वर्गों के सेवकों की वेतन एवं भत्तों में कटौती। (ii) राज्य विधायिका द्वारा पारित कर राष्ट्रपति के विचार हेतु लाए गए सभी धन विधेयकों अथवा अन्य वित्तीय विधेयकों को आरक्षित रखना।
3. राष्ट्रपति वेतन एवं भत्तों में कटौती हेतु निर्देश जारी कर सकता है—(i) केंद्र की सेवा में लगे सभी अथवा किसी भी श्रेणी के व्यक्तियों को और (ii) उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों की।

अत: वित्तीय आपातकाल की अवधि में राज्य के सभी वित्तीय मामलों में केंद्र का नियंत्रण हो जाता है। संविधान सभा के एक सदस्य एच.एन. कुंजरु ने कहा कि वित्तीय आपात राज्य की वित्तीय संप्रभुता के लिए एक गंभीर खतरा है। संविधान में इसे शामिल करने के कारणों की व्याख्या करते हुए डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने संविधान सभा में कहा था कि[14]:

''यह अनुच्छेद न्यूनाधिक रूप से 1933 में पारित संयुक्त राष्ट्र के 'राष्ट्रीय रिकवरी कानून' कहे जाने वाले ढांचे की तरह है, जिसने राष्ट्रपति को आर्थिक एवं वित्तीय दोनों तरह की परेशानियों को समाप्त के लिए समान प्रावधान बनाने की शक्ति दी। इसने अति शक्तिहीनता के परिणामस्वरूप अमेरिकी लोगों को पीछे छोड़ा।''

अब तक वित्तीय संकट घोषित नहीं हुआ है। यद्यपि 1991 में वित्तीय संकट आया था।

आपातकालीन प्रावधानों की आलोचना

संविधान सभा के कुछ सदस्यों ने संविधान में आपातकालीन प्रावधानों के संसर्ग की निम्न आधार पर आलोचना की:[15]

1. संविधान का संघीय प्रभाव नष्ट होगा तथा केंद्र सर्वशक्तिमान बन जाएगा।
2. राज्यों की शक्तियां (एकल एवं संघीय दोनों) पूरी तरह से केंद्रीय प्रबंधन के हाथ में आ जाएंगी।
3. राष्ट्रपति ही तानाशाह बन जाएगा।
4. राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता निरर्थक हो जाएंगी।
5. मूल अधिकार अर्थहीन हो जाएंगे और परिणामस्वरूप संविधान की प्रजातंत्रीय आधारशिला नष्ट हो जाएगी।

अत: एच.वी. कामथ ने मत प्रकट किया कि ''मुझे डर है कि इस एकल अध्याय द्वारा हम एक ऐसे संपूर्ण राज्य की नींव डाल रहे हैं जो एक पुलिस राज्य, एक ऐसा राज्य जो उन सभी सिद्धांतों और आदर्शों का पूर्ण विरोध करता है जिसके लिए हम पिछले दशकों में लड़ते रहें। एक राज्य जहां सैकड़ों मासूम महिलाओं एवं पुरुषों के स्वतंत्रता के अधिकार सदैव संशय में रहेंगे। एक राज्य जहां कहीं शांति होगी जो वह कब्र में होगी और शून्य अथवा रेगिस्तान में होगी (.....) यह शर्म और दु:ख का दिन होगा जब राष्ट्रपति इन शक्तियों का प्रयोग करेगा, जिनका विश्व के किसी भी लोकतांत्रिक देश के संविधान में कोई नहीं साम्य होगा।''[16]

के.टी. शाह ने इनकी व्याख्या इस प्रकार दी कि, ''प्रतिक्रिया और पतन का एक अध्याय (...)। मैंने पाया जो किसी ने नहीं कहा, परंतु दो विभिन्न धाराएं इस अध्याय के संपूर्ण प्रावधानों को रेखांकित एवं प्रभावित करती हैं—(i) केंद्र को ईकाइयों के विरुद्ध विशिष्ट शक्ति से सुसज्जित करना। और (ii) सरकार को इन लोगों के विरुद्ध सशक्त करना जो विशेषत: इस अध्याय के लगभग सभी अनुच्छेदों में दिए गए सभी प्रावधानों का अध्ययन और शक्तियों का सूक्ष्म निरीक्षण करते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि स्वतंत्रता और लोकतंत्र का नाम केवल संविधान में ही रह जाएगा।''

टी.टी. कृष्णामाचारी ने भय प्रकट किया कि, ''इन प्रावधानों के द्वारा राष्ट्रपति एवं कार्यकारी संवैधानिक तानाशाही का प्रयोग करेंगे।''[17]

एच.एन. कुंजरू ने कहा, ''वित्तीय आपातकाल के प्रावधान राज्य की वित्तीय स्वायत्तता के लिए एक गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं।

हालांकि संविधान सभा में इन प्रावधानों के समर्थक भी थे। अत: सरअलादि कृष्णास्वामी अय्यर ने इन्हें 'संविधान की जीवन साथी बताया।' महावीर त्यागी ने विचार व्यक्त किया कि यह 'सुरक्षा वाल्व' की तरह कार्य करेंगे और संविधान की रक्षा करने में सहायता करेगा।[18]

तालिका 16.2 *राष्ट्रपति शासन लगाना (1951-2016)*

क्रम सं.	राज्य/केंद्रशासित प्रदेश	कितनी-बार लगाया गया	किस वर्ष लगाया गया
I.	**राज्य**		
1.	आन्ध्र प्रदेश	3	1954,[20] 1973, 2014
2.	अरुणाचल प्रदेश	2	1979, 2016
3.	असम	4	1979, 1981, 1982, 1990
4.	बिहार	8	1968, 1969, 1972, 1977, 1980, 1995, 1999, 2005
5.	छत्तीसगढ़	–	–
6.	गोवा	5	1966, 1979, 1900, 1999, 2005
7.	गुजरात	5	1971, 1974, 1976, 1980, 1996
8.	हरियाणा	3	1967, 1977, 1991
9.	हिमाचल प्रदेश	2	1977, 1992
10.	जम्मू एवं कश्मीर	7	1977, 1986, 1990, 2002, 2008, 2015, 2016
11.	झारखंड	3	2009, 2010, 2013
12.	कर्नाटक	6	1971, 1977, 1989, 1990, 2007, 2007
13.	केरल	5	1956[21], 1959, 1964, 1970, 1979
14.	मध्य प्रदेश[22]	3	1974, 1980, 1992
15.	महाराष्ट्र	2	1980, 2014
16.	मणिपुर	10	1967, 1967, 1969, 1973, 1977, 1979, 1981, 1992
17.	मेघालय	2	1991, 2009
18.	मिजोरम	3	1977, 1978, 1988
19.	नगालैंड	4	1975, 1988, 1992, 2008
20.	ओडिशा	6	1961, 1971, 1973, 1976, 1977, 1980
21.	पजाब[23]	8	1957, 1966, 1968, 1971, 1977, 1980, 1983, 1987
22.	राजस्थान	4	1967, 1947, 1980, 1992
23.	सिक्किम	2	1978, 1984
24.	तमिलनाडु	4	1976, 1980, 1988, 1991
25.	तेलंगाना	–	–
26.	त्रिपुरा	3	1971, 1977, 1993
27.	उत्तराखंड	2	2016, 2016
28.	उत्तर प्रदेश	9	1966, 1970, 1973, 1975, 1977, 1980, 1992, 1995, 2002
29.	पश्चिम बंगाल	4	1962, 1968, 1970, 1971
II.	**संघशासित प्रदेश**		
1.	दिल्ली	1	2014
2.	पुडुचेरी	6	1968, 1974, 1974, 1978, 1983, 1991

तालिका 16.3 *आपात प्रावधान संबंधी अनुच्छेद: एक नजर में*

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
352	आपातकाल की घोषणा।
353	आपातकाल लागू होने के प्रभाव।
354	आपातकाल की घोषणा जारी रहते राजस्व के वितरण से संबंधित प्रावधानों का लागू होना।
355	राज्यों की बाहरी आक्रमण तथा आंतरिक अव्यवस्था से सुरक्षा संबंधी संघ के कर्तव्य।
356	राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता की स्थिति संबंधी प्रावधान।
357	अनुच्छेद 356 के अंतर्गत जारी घोषणा के बाद विधायी शक्तियों का प्रयोग।
358	आपातकाल में अनुच्छेद 19 के प्रावधानों का स्थगन।
359	आपातकाल में भाग III में प्रदत्त अधिकारों को लागू करना, स्थगित रखना।
359-ए	इस भाग को पंजाब राज्य पर भी लागू करना (निरस्त)।
360	वित्तीय आपातकाल संबंधी प्रावधान

जबकि डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने भी संविधान सभा में आपातकालीन प्रावधानों के बचाव में उनके दुरुपयोग की संभावनाओं को व्यक्त किया। उन्होंने कहा, ''मैं पूर्ण रूप से इनकार नहीं करता कि इन अनुच्छेदों का दुरुपयोग अथवा राजनैतिक उद्देश्य के लिए इनके प्रयोग की संभावना है।''[19]

संदर्भ सूची

1. *कांस्टीट्एंट असेम्बली डिबेट्स,* खंड VII, पृष्ठ 34
2. 'सशस्त्र विद्रोह' उक्ति को 44वें संशोधन अधिनियम 1978 द्वारा शामिल किया गया। यह परिवर्तन मूल उक्ति 'आंतरिक विघटन' के स्थान पर किया गया।
3. अनुच्छेद 352 'मंत्रिमण्डल' शब्द की व्याख्या करता है, जिसमें प्रधानमंत्री एवं अन्य मंत्रिमण्डल स्तर के मंत्रियों की परिषद होती है।
4. *मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ* (1980)
5. पांचवीं लोकसभा का कार्यकाल जो 18 मार्च, 1976 को समाप्त होता गया था, उसे एक वर्ष के लिए 18 मार्च, 1977 तक बढ़ाया गया। यह बढ़ोतरी लोकसभा (कालावधि विस्तारण) अधिनियम, 1976 द्वारा हुई। इसे फिर एक वर्ष के लिए 18 मार्च, 1978 तक बढ़ाया गया। यह लोकसभा (कालावधि विस्तारण) संशोधन अधिनियम, 1976 के द्वारा हुई। हालांकि पांच वर्ष दस माह 6 दिन के विस्तार के बाद 18 जनवरी, 1977 को सदन विघटित कर दिया गया।
6. 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 ने इस काल को 6 माह से 1 वर्ष कर दिया। इस तरह संसद के दोनों सदनों से पारित होने के बाद राष्ट्रपति शासन एक वर्ष तक लागू रहेगा। लेकिन 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 में पुन: इस अवधि को 6 माह कर दिया गया।
7. 1987 में पंजाब में लागू राष्ट्रपति शासन 68वें संशोधन अधिनियम 1991 के अंतर्गत पांच वर्ष तक जारी रहा।
8. विघ्टन होने की स्थिति में राज्य में नई विधानसभा के गठन के लिए नये चुनाव होंगे।
9. उन नौ राज्यों में राजस्थान, उत्तर-प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, बिहार, हिमाचल प्रदेश, ओडिशा, पश्चिम बंगाल और हरियाणा शामिल हैं।

10. उन नौ राज्यों में उत्तर-प्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश, पंजाब, उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र और तमिलनाडु शामिल हैं।
11. *एस.आर. बोम्मई* बनाम *भारत संघ* (1994)
12. *कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स,* खंड IX, पृष्ठ 133, और 177
13. केन्द्र-राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट, भाग-I पृष्ठ 165-180 (1988)
14. *कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स,* खंड X, पृष्ठ 361-372
15. एम.वी. पायली से संदर्भित, *इंडियन कांस्टीट्यूशन,* एस.चांद, पांचवां संस्करण 1994, पृष्ठ 280
16. *कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स,* खंड IX पृष्ठ 105
17. वही, पृष्ठ 123
18. वही, पृष्ठ 547
19. वही, पृष्ठ 177
20. यह आन्ध्र राज्य में लगाया गया।
21. यह त्रावणकोर-कोचीन में लगाया गया।
22. विंध्य प्रदेश में 1949-1952 के बीच राष्ट्रपति शासन था। यह राज्य 1956 में मध्य प्रदेश में मिला दिया गया।
23. 1953 में पटियाला तथा ईस्ट पंजाब स्टेट्स यूनियन (PEPSU) में राष्ट्रपति शासन लगाया गया, बाद में यह क्षेत्र पंजाब राज्य में मिल गया।